RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-02
February -2019
ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com [UGC Listed Journal]

'उत्तररामचरितम्' नाटक में सीता के चरित्र का काव्य–शास्त्रीय अध्ययन

गायत्री देवी सुपुत्री श्री पूर्णमल शर्मा

संस्कृत अध्यापिका, राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय सह–शिक्षा तरावड़ी, करनाल।

भारतीय काव्य–शास्त्र में नायिका के चरित्र चित्रण तथा उसके चरित्र विशलेषण की एक दीर्घ परम्परा विद्यमान रही है। प्रायः सभी काव्य शास्त्रीयों ने नायिका भेद का वर्णन किया है। अधिकांश काव्य शास्त्री केवल तीन प्रकार की नायिका ही स्वीकार करते हैं। परन्तु आचार्य भरत ने चार प्रकार की नायिकाओं की स्थिति स्वीकार की हैं। आचार्य भरत के अनुसार–दिव्या, नृपस्त्री, कुलस्त्री तथा गणिका नामक चार प्रकार की नायिका होती हैं। नाट्य–दर्पण के रचियता रामचन्द्र गुणचन्द्र ने भी चार प्रकार की नायिकाएँ स्वीकार की हैं–

नायिका कुलजा दिव्या क्षत्रिया पण्यकामिनी।
अन्तिमा ललितो दात्ता पूर्वोदात्ता त्रिधा परे।।[1]

अर्थात्–कुलजा, दिव्या, क्षत्रिया और वेश्या नामक चार प्रकार की नायिका होती हैं। उनमें से अन्तिम अर्थात् वेश्या नायिका ललितोदात्त ही होती है और पहली (अर्थात् कुलजा) नायिका उदात्त होती है। शेष दोनों नायिका (दिव्या और क्षत्रिया) तीन प्रकार की होती हैं–धीरा, ललिता और उदात्ता।

आचार्य धनंजय ने तीन प्रकार की नायिकाओं को मान्यता दी है। उनके अनुसार नायिका भी नायक के समान गुणों से युक्त होती है। उन्होंने तीन प्रकार निम्न नायिका स्वीकार की हैं–

1. स्वकीयाः–आचार्य धनंजय ने स्वकीया नायिका का निम्न लक्षण दिया है–

मुग्धा मध्या प्रगलभेति स्वीया शीलार्जवादिमुक्[2]

अर्थात्–जो नायिका शील तथा सरलता आदि गुणों से युक्त होती है, उसे स्वकीया नायिका कहा जाता है। शील का अर्थ है सदाचरण। इस नायिका को पुनः उपभेदों में विभक्त किया गया है; जो इस प्रकार हैं–मुग्धा, मध्या तथा प्रगल्या।

2. परकीयाः–परकीया नायिका का लक्षण इस प्रकार है–

अन्य स्त्री कन्यकोढ़ा च नान्योढ़ा ऽगिरसे कवचित्
कन्यानुशगमिच्छातः कुर्भादगांगिसंश्रमम्।।[3]

अर्थात–परकीया नायिका दो प्रकार की होती है। कन्या तथा विवाहिता। अन्य विवाहिता स्त्री (परोढ़ा) को कभी भी प्रधान रस की नायिका नहीं बनाना चाहिये। कन्या के अनुराग को तो कवि अपनी इच्छानुसार प्रधान या अप्रधान रस का आधार बना सकता है।

3. साधारण स्त्री (गणिका)

आचार्य धनंजय ने साधारण स्त्री को नायिका (वेश्या) कहते हुए उसे इस प्रकार परिभाषित किया है–

साधारण स्त्री गणिका कलाप्रागल्भ्यधौ र्त्ययुक्।[4]

अर्थात्–साधारण स्त्री तो गणिका होती है। यह नायिका कला प्रगल्भता तथा धूर्तता से युक्त होती है। यह नायिका छिपकर प्रेम करने वाले, सुखपूर्वक धन प्राप्त करने वाले, अज्ञानी स्वच्छन्द अहंकारी और पण्डक आदि को, यदि वह धन हो तो उसे अनुरक्ता के समान प्रेम करती है। तथा धन से रहित होने पर उसको निःस्वान माता के द्वारा घर से बाहर निकलवा देती है।

विभिन्न लक्षण ग्रथकारों ने नायिका भेद के साथ–साथ इन आठ अवस्थाओं का चित्रण भी अपने–अपने लक्षण ग्रंथों में किया है। उनके अनुसार नायिका की आठ अवस्थाएँ (दशाएँ) होती हैं–जो इस प्रकार हैं–स्वाधीनपतिका, वासकसज्जा, विरहोत्कंठिता, खण्डिता, कलहान्तरिता, विप्रलब्धा, प्रोषितप्रिया तथा अभिसारिका। ये अवस्थाएँ स्वकीया तथा परकीया नायिका की ही होती हैं, गणिक नामक नायिका की नहीं।

यह सर्वमान्य सत्य है कि सीता का चरित्र भारतीय साहित्य तथा भारतीय समाज में सुवर्ण की तरह खरा समझा जाता है। आज भी किसी पतिव्रता स्त्री को उसके वास्तविक नाम की जगह 'सीता' उद्बोधन से संबोधित करने की परम्परा मिल जाती हैं। सीता का 'चरित्र' भारतीय साहित्यकारों का प्रिय विषय रहा है।

भवभूति ने अपने 'उत्तररामचरितम्' नामक नाटक में सीता का चरित्र एक स्वकीय नायिका के रूप में उभारा है। यह स्वकीय नायिका में कितने गुण अपेक्षित है। भवभूति के नाटक में उन सभी गुणों की प्रतिपूर्ति के रूप में 'सीता' को चित्रित किया गया है।

स्वकीय नायिका के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह होती है कि वह अपने पति के प्रति एकनिष्ठ रहती है। स्वकीया नायिका को चाहे किसी भी परिस्थिति में रखा जाए, वह अपना 'शील' एकनिष्ठ रहती है। 'उत्तररामचरितम्' नाटक में भी सीता की इसी एकनिष्ठता का सर्वत्र चित्रण मिलता है। राम के कहने पर लक्ष्मण सीता को वन में छोड़ आते हैं। वहाँ पर सीता स्वयं को अकेली पाती है, तो वह गंगा में कूदकर आत्मदाह का प्रयास करती है गंगा प्रथा पृथ्वी सीता को

RRIJM 2015, All Rights Reserved

पाताल लोक में पहुँचा देती है। वही पर उन्हें लव तथा कुश नामक दो पुत्र पैदा होते हैं। जब ये बच्चे दुग्धपान करना छोड़ देते हैं, तो गंगा इन बच्चों को वाल्मिकी के आश्रम में छोड़ देती है। बारह वर्ष के उपरान्त जब रामचन्द्र पुनः वन में आते हैं, तो उन्हें सीता के साथ बिताए गए दिनों की याद आने लगती है। वह सीता का याद करके मूर्छित हो जाते है, तब वहाँ पर सीता उपस्थित होती है। गंगा जी के प्रभाव के कारण सीता अदृश्य रहती है। अतः कोई भी सीता को नहीं देख सकता। राम की मूर्छित अवस्था को देखकर सीता का हृदय द्रवित हो उठता है। वह भगवान राम को पुनः–पुनः होश में लाती है। वह वासन्ती से कहती है कि–आर्यपुत्र के दुर्वार (न रोके जाने वाले) दारुण शोक से अपना दुःख भूलकर मेरा हृदय निर्जीव होकर फटा जा रहा है–

आर्यपुत्रस्मैतेन दुर्वारदारुणारम्भेण दुःख संयोगेन
परिसुषितनिजदुःखं प्रभुक्तं जीवितं मे हृदयं स्फुटति।[5]

राम की दयनीय दशा से विचलित होकर सीता अपने परित्याग का दुःख भूल जाती है। जब सीता को पता चलता है कि राम ने दूसरा विवाह नहीं किया, तो वह राम के प्रति अपने आक्रोश को भूल जाती है। वह नारी समोचित भावनाओं को प्रकट करती हुई कहती है कि–हा देव! ये मेरे बिना और मैं इनके बिना रहूँगी यह किसने सोचा था। अतः मैं जन्मातंर में भी दुर्लभ प्रिय के दर्शनों को आसुंओं के उमड़ने तथा गिरने के बीच वाले समय में देखती हूँ–

–हा देव! एज मया बिना अहमप्येतेन विनेति
केन सम्भावितमासीत्। तन्मुहूर्तमात्रं जन्मातंरादपि
दुर्लभ लब्ध दर्शनं वाष्पसलिलान्तरेपु पश्यामि तावद्
वत्सलमार्यपुत्रम्।[6]

जब वासन्ती राम पर बार–बार आक्षेप लगाती है कि उसने अकारण ही सीता का परित्याग कर दिया, तो वह उन्हें बार–बार रोकते हुए कहती है कि सखि वासन्ती। त्वमेव दारुण कठोरा च मैवं प्रलपन्त प्रलापयसि। अर्थात् हे सखि वासन्ती! तुम बहुत दारुण तथा कठोर हो, जो इस प्रकार का प्रलाप कर रही हो।

नाटक के तीसरे अंक में सीता का आर्दश पत्नी रूप उभर कर सामने आता है। इस अंक में रामचन्द्र का विरह जनित करुण भाव पराकाष्ठा तक पहुँच जाता है, तो सीता का आदर्श एवं पतिव्रता स्वरूप उभरकर सामने आता है। वह राम की विरह जनित अश्रुधारा को नहीं देख पाती। वह कहता है कि–आर्यपुत्र मुझ मन्दभागिनी को लक्ष्य करके, समस्त संसार के कल्याण के लिए जन्म लेने वाले, आपका जीवन भंयकर परिणाम वाला हो रहा है। इसलिये हाय! मैं मृतप्रायः हो रही हूँ।

सीता–आर्यपुत्र! मां मन्दभागिनी मुद्दिश्य सकल जीत लोक मांगलिक जन्मलाभक्य ते वारं–वारं संशक्ति जीवित दारुणो दशापरिणाम हा हवास्मि।

जब सीता को पता चलता है कि राम ने अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन करते समय सुवर्णमयी प्रतिमा की स्थापना करवाई थी, तो सीता का विरह जनित उन्माद समाप्त हो जाता है। अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन करते समय पत्नी की उपस्थिति आवश्यक है। जब सीता को पता चलता है कि राम ने अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन करते समय सीता की 'सुवर्णमयी प्रतिमा' को स्थापित किया था, तो उसका विरह जनित शल्य उखड़ जाता है। तब वह कहती है कि हे आर्यपुत्र! तुम सच में धन्य हो। (अर्थात् तुम एक पत्नीव्रती हो) अब आर्यपुत्र ने मेरे परित्याग शल्य को उखाड़ डाला है–

–आर्यपुत्र! इदानीममि त्वम्। अहो, उत्खतितमिदानिम्
मे परित्याग शल्यमार्य पुत्रेण।[7]

सीता के उपर्युक्त संवाद से उसके इस भाव का पता चलता है कि सीता अब राम की मजबूरी को समझ गई है। पहले वह यह मानती थी कि राम ने अकारण ही उनका परित्याग किया है, किन्तु जैसे ही उन्हें पता चलता है कि इसके पीछे एक कारण 'लोकापवाद' था। राजा का प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह प्रजा का विश्वास कायम रखे। आर्यपुत्र राम ने प्रजा के हित में ही वह निर्णय लिया था। तब सीता अपने स्वयं के दुःख को विस्मृत कर देती है तथा राम की मजबूरी को समझती है कि वस्तुतः राम ने लोकापवाद के निराकरण हेतु ही ऐसा निर्णय लिया था।

स्वकीया नायिका की एक अन्य विशेषता यह होती है कि वह दयालु स्वभाव की होती है। वह जीव जगत से प्रेम करने वाली होती है। नाटक में अनेक स्थलों पर सीता के दयालु स्वभाव का चित्रण मिलता है। जब राम का वनवास हुआ था, तो राम अपनी सीता तथा भाई लक्ष्मण के साथ पर्णकुटी में रहते थे। पर्णकुटी के आस–पास रहने वाले जीव–जन्तु सीता के संसर्ग में अभय करते थे। वह मोरों का पालन–पोषण करती थी। वासन्ती उसके इस दयालु स्वभाव का वर्णन करते हुए कहती है–

वासन्ती–इतोऽपि देवः पश्यतु–
अनुदिवसमवर्धयत्प्रिया ते
यमचिरनिर्गत मुग्ध लोलवर्हम्।
मणिभुकुट इवोच्छिवः कदम्वे
नदति स एष वधूसखः शिखण्डी।[8]

अर्थात्–नये निकले हुए सुन्दर और चंचल पंखों वाले जिस मयूर को आपकी प्रिया सीता ने प्रतिदिन पाला था वह अब कदम्ब के वृक्ष पर अपनी पत्नी के साथ ऊँची कलँगी से युक्त (अर्थात्–ऊपर को फैलाने वाली किरणों से युक्त) होकर कूक रहा है।

वासंती के उपर्युक्त संवाद से सीता के दयालु स्वभाव का पता चलता है कि वह जीवमात्र पर दया दिखाने वाली है। नाटक के प्रथम अंक में सीता जब राम के वक्षस्थल पर सो जाती है, तो राम उसकी प्रशंसा करते हुए कहते है कि–यह सीता मेरे घर में लक्ष्मी है, आँखों के लिये अमृत की सलाई है।

RRIJM 2015, All Rights Reserved

इसका यह स्पर्श शरीर में गाढ़े–गाढ़े चन्दन रस का लेप है और इसकी यह भुजलता कष्ठ में शीतल और दिनग्ध मोतियों के हार के समान है। ओर अधिक क्या? इसकी कौन सी वस्तु प्रिय नहीं है? (अपितु सभी कुछ प्रिय है।) परन्तु इसका विरह सर्वथा असह्य है।

–इयं गेहेलक्ष्मीरियम मृतवर्तिन यनयो–
रसावस्याः स्पर्शो वपुषि बहुलश्चन्दनरसः।
अयं बाहुः कण्ठे शिशिर मसृणो मौक्तिकमरः
किमस्याः न प्रेयो? यदि परमसह्यस्तु विरहा।।[9]

नाटक के सप्तम् अंक में जब राम तथा सीता का पुनर्मिलन होता है, तो सीता अपने पुराने दुःखों तथा विषादों को भूल जाती है। तब वह कहती है कि मुझे तो फिर से जीवन मिल गया।

सीता–प्रत्युज्जीविता स्मि।[10]

सीता के उपरोक्त संवाद से यह अभिप्रायः निकलता है कि वह राम के बिना अपने जीवन को अपूर्ण मानती है। जैसे ही उनका मिलन होता है, तो वह यही कहती है कि उसे फिर से जीवन मिल गया है। अभी तक उसका जीवन 'जीवन' न होकर जड़वत् प्रतिमा के रूप में श्वास धारण कर रहा था। अब उसके जीवन में पुनः खुशियों का समावेश हो गया है।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि एक स्वकीया नायिका की जो चरित्रगत एवं स्वभावगतः विशेषताएँ होती हैं, वे सभी विशेषताएँ उनके चरित्र में विद्यमान हैं। वह आदर्श गृहिणी के रूप में चित्रित है। इसके साथ–साथ वह आदर्श पत्नी की विशेषताओं से भी युक्त है। भवभूति ने अपने 'उत्तररामचरितम्' नाटक में स्वकीया नायिका के उदात्त पक्ष को उजागर किया है तथा सीता चरित्र स्वकीया नायिका की श्रेष्ठतम प्रतिमूर्ति बनकर उभरा है।

संदर्भ ग्रंथ–सूची

1. नाट्य–दर्पण, रामचन्द्र गुणचन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली–1990, पृ०–378
2. दशरूपक, आचार्य धनंजय, साहित्य भंडार, मेरठ–2/15, पृ०–134
3. –वहीं–पृ०–247
4. –वही–पृ०–148
5. उत्तररामचरितम्, भवभूति, साहित्य भंडार, मेरठ, पृ०–247
6. –वही–पृ०–229
7. –वही–पृ०–267
8. –वही–पृ०–222
9. –वही–पृ०–61
10. –वही–पृ०–483